बलिदान और शौर्य की विभूति भामाशाह

□ डॉ० देवीलाल पालीवाल
निदेशक, साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर

इतिहासप्रसिद्ध स्वातन्त्र्य योद्धा मेवाड़ के महाराणा प्रतापसिंह (१५४०-१५९७) के साथ कर्मवीर भामाशाह का नाम राष्ट्रीय इतिहास में अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। विदेशी दासता के विरुद्ध राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन काल में दोनों ऐतिहासिक व्यक्तित्व स्वतन्त्रता के लिये जूझने वाले भारतीय स्वतन्त्रता सेनानियों के लिये त्याग, तपस्या, साहस और वीरता के अनवरत प्रेरणास्रोत बने। विदेशी गुलामी को अस्वीकार कर प्रताप ने स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये सभी प्रकार के ऐश्वर्य प्रलोभनों और सुख की जिन्दगी को छोड़ा और अपने परिजनों सहित जीवन-पर्यन्त पहाड़ों एवं जंगलों में संकट झेलते हुए एवं अत्यन्त साधारण जीवन जीते हुए आजादी के लिये संघर्ष किया। महाराणा प्रताप के प्रधान भामाशाह ने अपने शासक का अनुसरण किया और अपने परिजनों तथा सभी सुख-साधनों को स्वतन्त्रता-संघर्ष में होम दिया। मेवाड़ के इस स्वतन्त्रता-संघर्ष में भामाशाह एक साहसी एवं कुशल योद्धा, एक सुविज्ञ एवं चतुर प्रशासक तथा सक्षम एवं दूरदर्शी व्यवस्थापक के रूप में उभरा। यदि प्रताप के जीवन-आदर्शों एवं संघर्ष ने भारत के जन-जन को स्वतन्त्रता के लिए मर-मिटने एवं सर्वस्व बलिदान करने के लिये प्रेरित किया तो भामाशाह के उदाहरण ने देश के सम्पन्न धनिक वर्गों को देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों का भान कराया, उनमें देशभक्ति की भावना पैदा की तथा देश के लिये स्वयं को, अपने परिजनों को तथा अपने साधनों को अर्पित करने के लिये प्रेरणा दी। यही कारण है कि महाराष्ट्र और गुजरात से लेकर बंगाल और आसाम तक तथा काश्मीर से लेकर केरल तक राष्ट्रीय साहित्य में महाराणा प्रताप के साथ-साथ भामाशाह का स्मरण एक वीर योद्धा के साथ-साथ दानवीर एव बलिदानी देशभक्त के रूप में किया गया है। स्वतन्त्र और जनतन्त्रीय भारत के वर्तमान राष्ट्रीय सन्दर्भ में भी इन दोनों ऐतिहासिक व्यक्तित्वों के जीवन आदर्शों एवं राष्ट्रीय देन के महत्त्व को आसानी से आँका जा सकता है। आज जबकि देश में स्वार्थपरता, अनैतिकता और ऐश्वर्य-साधना की होड़ लगी हुई है, राष्ट्रीय एवं सार्वजनिक हितों पर प्रहार करके, सामान्य जन के हितों का बलिदान करके उच्च वर्गों में अपने और अपने परिजनों के हित साधन की प्रवृत्ति फैली हुई है, प्रताप का उच्च चरित्र, राष्ट्रीय हितों पर निजी हितों को कुर्बान करने, भोग-विलास के जीवन का त्याग करके जन साधारण के समान एवं उनके साथ जीवन जीकर संघर्ष करने, अपने सिद्धान्तों, आदर्शों और प्रतिज्ञाओं का दृढ़ता से पालन करने का उनका जीवन-व्यवहार वर्तमान भारतवासियों के लिये प्रेरणास्पद है। उसी भाँति भामाशाह का बलिदानी जीवन देश के वर्तमान उच्च प्रशासक एवं सम्पन्न वर्गों को उलाहना दे रहा है, जिनमें अनैतिकता और शोषण की प्रवृत्ति का व्यापक रूप से प्रसार हो रहा है।

अब तक की गई व्यापक शोध के बावजूद भामाशाह के जीवन एवं कृतित्व के सम्बन्ध में अपर्याप्त जानकारी मिली है। भामाशाह ने कावड़िया गोत्र के ओसवाल कुल में जन्म लिया और उसके पिता का नाम भारमल था, इसकी स्पष्ट जानकारी प्राचीन ग्रन्थों में मिलती है। समकालीन कवि हेमरत्न सूरि कृत "गोरा बादल कथा पद्मनी चउपई"[1] ग्रन्थ की प्रशस्ति में उल्लेख मिलता है—

१. हेमरत्न सूरि एक अयाचक साधु थे। मेवाड़ के प्रधान भामाशाह के भ्राता ताराचन्द ने, जो महाराणा प्रताप की ओर से गोडवाड़ इलाके का प्रशासन करते थे, इनसे यह रचना करवाई थी। वि०सं० १६४५ की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्वी परगटा राण प्रताप। प्रतपइ दिन दिन अधिक प्रताप ॥
तस मन्त्रीसर बुद्धि निधान। कावड़िया कुल तिलक निधान ॥
सामि धरमि धुरि भामुंसाह। वयरी वंस विधुंसण राह ॥

विदुर वायस्क कृत 'भामा बावनी' में उल्लेख है कि भामाशाह श्वेताम्बर जैन की नूमन गच्छ शाखा के मानने वाले थे। पृथ्वीराज के कुल में भारमल्ल उत्पन्न हुए, जिनसे कावड़िया शाखा निकली। भारमल्ल को जसवन्त, करुण, कलियाण, भामाशाह, ताराचन्द नामक पुत्र उत्पन्न हुए।

नूमन गच्छ नागोरि आनि देपाल जिसा गुर।
दया धाम दाखिये, देव चउवीस तिथंकर।
पिरिया वटि पृथिराज, सांड भारमल्ल सुणिज्जे।
जसवन्त वाँधव जोड़, करण कलीयाण कहिज्जई ॥
ताराचन्द लखमण राम जिन, घित धो भण जोड़ी धयो।
कुल तिलक अभंग कावेडिया, भामो उजवालयग भयो ॥१॥
मूल पेड़ भारमल्ल, साव कावेडियां सोहाइ।
पुत्र पौत्र परिवार, मउरि मूंझण दति मोहइ ॥२॥[1]

जैन कवि दौलतराम विजय (दलपत) कृत खुमाणरासो राजस्थानी ग्रन्थ में निम्न उल्लेख मिलता है—

साह बसें मेवाड़ धर, कावेड्यो कुल मांण।
भामो भारहमल तणो, राँण तणो परधान ॥३॥[2]

प्राप्त जानकारी के अनुसार भामाशाह के पूर्वज अलवर क्षेत्र में रहते थे। इतिहासप्रसिद्ध मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह के काल तक भामाशाह के पूर्वज मेवाड़ क्षेत्र में आ वसे थे। वि०सं० १६१६ में उनके पिता भारमल चित्तौड़ में मौजूद थे।[3] उससे पूर्व महाराणा संग्रामसिंह द्वारा भारमल को रण-थम्भौर का किलेदार नियुक्त किये जाने का प्राचीन पट्टावलियों[3] में स्पष्ट उल्लेख मिलता है। इनसे यह जानकारी भी मिलती है कि भारमल प्रारम्भ में तपागच्छ सम्प्रदाय के अनुयायी थे, बाद में उन्होंने देवागर से प्रभावित होकर नागोरी लोकागच्छ को स्वीकार कर लिया था। उनका परिवार धनी और सम्पन्न था। महाराणा के विश्वस्त दरबारी होने के कारण ही महाराणा संग्रामसिंह द्वारा उनको कुंवर विक्रमादित्य एवं उदयसिंह की सुरक्षा का उत्तरदायित्व देकर रणथम्भौर किले का किले-

---

श्रावण शुक्ला ५ को सादड़ी ग्राम में इस ग्रन्थ की रचना सम्पन्न हुई थी। राजस्थान राज्य प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान द्वारा हाल ही में यह ग्रन्थ प्रकाशित किया गया है।

यही जानकारी सादड़ी (मारवाड़) स्थित तारा बावड़ी के वि० सं० १६५४ के शिलालेख में उपलब्ध होती है। द्रष्टव्य—श्री रामवल्लभ सोमानी का लेख 'मरुधर केसरी अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० १७६ एवं १७८.

१. शोधपत्रिका, वर्ष १४, अंक २, पृ० १३५-४७—इस ग्रन्थ की रचना वि०सं० १६४६ आश्विन शुक्ला १५ को सम्पन्न हुई। श्री अगरचन्दजी नाहटा के अनुसार इस ग्रन्थ की एक अन्य प्रति में रचनाकाल वि०सं० १६४८ मिलता है।

२. शोध पत्रिका, वर्ष १४, अंक १, पृष्ठ ६३.

३. शोध पत्रिका, सं० १६१६ चित्रकूट महादुर्गे.....
(नागपुरीय लुंकागच्छीय पट्टावली का अंश) डा० देवीलाल पालीवाल—सम्पादित महाराणा प्रताप स्मृति ग्रन्थ पृ० ११४, तथा मरुधरकेसरी अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० १७७-७८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दार बनाया गया था।[1] ये दोनों पुत्र अपनी माता हाड़ी करमेती के साथ यहीं रहा करते थ। ऐसा प्रतीत होता है कि बाद में हाड़ा सूरजमल को उनकी जगह रणथम्भौर की रक्षा का उत्तरदायित्व दे दिया गया था। राणा सांगा के बाद रतनसिंह चित्तौड़ का स्वामी बना। तुजके बाबरी[2] (बाबर की आत्मकथा) में उल्लेख है कि रानी करमेती ने मेवाड़ का स्वामित्व अपने पुत्र विक्रमादित्य के लिये प्राप्त करने हेतु बाबर की सहायता चाही थी और उसकी एवज में रणथम्भोर देने का प्रस्ताव किया था। किन्तु थोड़े ही समय बाद रतनसिंह की मृत्यु और विक्रमादित्य का मेवाड़ महाराणा बनने की घटनाएं हो गईं। उधर रणथम्भौर भी मेवाड़ के आधिपत्य से निकलकर मुगलों के हाथों में चला गया।

यह भी जानकारी मिलती है कि महाराणा उदयसिंह ने गद्दीनशीन होने के बाद भारमल परिवार की विशिष्ट सेवाओं के कारण वि० सं० १६१० में भारमल को एक लाख का पट्टा देकर प्रतिष्ठित किया था। ऐसी मान्यता है कि चित्तौड़ की तलहटी में पाडनपोल के पास भारमल की हस्तिशाला थी और ऊपर महलों के सामने तो परवाने के निकट उनकी हवेली थी। जनश्रुति के आधार पर यह मान्यता भी चली आयी है कि उदयपुर के महलों के निकट स्थित गोकुल चन्द्रमाजी के मन्दिर के पास भामाशाह का निवास था जो दीवानजी की पोल के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उदयपुर के कुछ मील दूर स्थित सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थल में जावर में मोती बाजार के निकट भामाशाह की हवेली होने तथा जावर माता के विशाल मन्दिर का भामाशाह द्वारा निर्मित किये जाने की भी मान्यता रही है।[3]

भामाशाह का जन्म सोमवार आषाढ़ शुक्ला १०, १६०४ वि० सं० (२८ जून, १५४७ ई०) को हुआ माना जाता है।[4] इसके अनुसार भामाशाह प्रताप से सात वर्ष छोटे थे। भामाशाह के प्रारम्भिक जीवन के सम्बन्ध में अब तक कोई जानकारी नहीं हुई है। १५७२ ई० में महाराणा प्रताप के गद्दीनशीन होने के समय भामाशाह पच्चीस वर्ष के नवयुवक थे। उस समय तक सम्भवतः उनके पिता भारमल का देहावसान हो चुका था। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि भारमल अपनी सेवाओं और स्वामिभक्ति के कारण महाराणा उदयसिंह के विश्वासपात्र प्रमुख राजकीय व्यक्ति हो गये थे; किन्तु उनको दीवान पद मिल गया हो, ऐसी जानकारी नहीं मिलती। वस्तुतः इस परिवार में यह पद भामाशाह को पहली बार मिला, जो निस्सन्देह ही उनके पिता भारमल द्वारा मेवाड़ राज्य को अर्पित उपयोगी सेवाओं के प्रभाव तथा नवयुवक भामाशाह की वीरता एवं प्रशासनिक क्षमता के कारण प्राप्त हुआ। ज्ञातव्य है कि चित्तौड़ पतन (१५६८ ई०) के बाद भामाशाह का परिवार भी महाराणा उदयसिंह एवं अनके सहयोगियों के साथ मेवाड़ का स्वतन्त्रता संघर्ष जारी रखने हेतु एवं तदर्थ संकटों एवं आफतों से पूर्ण जीवन-यापन करते हुए अपना सर्वस्व त्याग एवं बलिदान करते हुए, पर्वतीय इलाके में चला गया था। इस बात की स्पष्ट जानकारी नहीं मिलती कि महाराणा प्रताप ने भामाशाह को कब दीवान पद पर आसीन किया। फिर भी अन्य ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर यह निर्णय करना सही प्रतीत होता है कि हल्दीघाटी युद्ध के बाद जब महाराणा प्रताप ने मेवाड़ की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए लम्बे काल तक कठिन छापामार युद्ध चलाने तथा मेवाड़ के सम्पूर्ण जनजीवन, अर्थव्यवस्था तथा प्रशासनिक-व्यवस्था को दीर्घकालीन स्वतन्त्रता संघर्ष के लिए सामरिक आधार (War Footing) पर संचालित करने का निश्चय किया, उस समय तथा उसके बाद जो नई व्यवस्थाएँ एवं परिवर्तन किये, तब भामाशाह को भूतपूर्व प्रधान रामा महासाणी के स्थान पर राज्य के प्रशासन के सर्वोच्च पद पर दीवान (प्रधान) का उत्तरदायित्व दिया गया। उस समय तक भामाशाह की आयु तीस वर्ष से अधिक हो चुकी थी। वह हल्दीघाटी के युद्ध में अपना शौर्य, साहस और वफादारी प्रदर्शित कर चुके थे। इतिहास इस बात का साक्षी है कि भामाशाह के सम्बन्ध में महाराणा प्रताप का निर्णय सर्वथा

---

१. कविराजा श्यामलदास : वीर विनोद, भाग २, पृ० २५२
२. तुजके बाबरी (अँग्रेजी अनुवाद) पृ० ६१२-१३
३. बलवन्तसिंह मेहता का लेख—कर्मवीर भामाशाह, महाराणा प्रताप स्मृति ग्रन्थ (सं० डॉ० देवीलाल पालीवाल), पृ० ११४
४. कविराजा श्यामलदास : वीर विनोद, भाग २, पृ० २५१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सही एवं दूरदर्शितापूर्ण सिद्ध हुआ। भयानक संकटों एवं कठिन संघर्षों के दौरान प्रताप के अविचल एवं वफादार सहयोगी के रूप में भामाशाह इतिहास में विख्यात हो गये हैं। दीर्घकालीन स्वातन्त्र्य-संघर्ष के दौरान भामाशाह एक कुशल योद्धा, सेनापति, संगठक एवं प्रशासक सिद्ध हुए। भामाशाह को प्रधान बनाये जाने के सम्बन्ध में निम्न कहावत प्रचलित है—

भामो परधानो करे, रामो कोदो रद्द।
धरची बाहर करण नूँ, मिलियो आया मरद्द॥[1]

हल्दीघाटी के इतिहास-प्रसिद्ध युद्ध में भामाशाह और उनके भाई ताराचन्द के मौजूद होने का स्पष्ट उल्लेख तवारीखों में मिलता है।[2] वे महाराणा प्रताप की सेना के हरावल (अग्रिम भाग) के दाहिने भाग में थे। हल्दीघाटी में मुगल सेना की ओर से लड़ने वालों में 'मुन्तखाब उत तवारीख' इतिहास ग्रन्थ का लेखक मौलवी अल बदायुंनी भी था। उसने लिखा है कि मेवाड़ी सेना के हरावल के जबरदस्त आक्रमण ने मुगल सेना को ६ कोस तक खदेड़ दिया था। भामाशाह और उनके भाई ताराचन्द ने इस युद्ध में जो युद्धकौशल, वीरता और शौर्य प्रदर्शन किया, उसके कारण ही बाद में उनको राज्य शासन की बड़ी जिम्मेदारियाँ दी गई।[3]

हल्दीघाटी युद्ध के बाद प्रताप ने मुगलों से लड़ने के लिए दीर्घकालीन छापामार युद्ध का प्रारम्भ किया, जो लगभग १० वर्षों (१५७६-१५८६) तक चला। प्रताप के कृतित्व की यह चिरस्मरणीय सफलता थी कि उन्होंने न केवल तत्कालीन विश्व के सर्वाधिक शक्तिशाली बादशाह अकबर के मेवाड़ को आधीन बनाने के प्रयासों को निष्फल कर दिया, अपितु उन्होंने मुगल आधिपत्य से मेवाड़ के उस मैदानी इलाके को पुनः जीत लिया, जो अकबर ने १५६८ में चित्तौड़ पर आक्रमण के समय अपने आधीन कर लिया।[4] प्रताप के इस दीर्घकालीन छापामार युद्ध की महत्त्वपूर्ण घटनाओं के साथ भामाशाह का नाम जुड़ा हुआ है। मेवाड़ी सेना के एक भाग का वह सेनापति था। भामाशाह अपनी सैन्य टुकड़ी लेकर मुगल-थानों एवं मुगल सैन्य टुकड़ियों पर हमला करके मुगल जन-धन को बर्बाद करता था और शस्त्रास्त्र लूटकर लाता था। इसी भाँति उसने कई बार शाही इलाकों पर आक्रमण किये और लूट-पाट कर मेवाड़ के स्वतन्त्रता-संघर्ष के लिए धन और साधन प्राप्त किये। ये आक्रमण गुजरात, मालवा, मालपुरा और मेवाड़ के सरहद पर स्थित अन्य मुगल इलाकों में किये जाते थे। जब मुगल सेनापति कछवाहा मानसिंह मेवाड़ में मुगल थाने कायम कर रहा था उस समय प्रताप के ज्येष्ठ कुंवर अमरसिंह के साथ भामाशाह मालपुरे धन प्राप्त करने में लगा हुआ था।[5] वि० सं० १६३५ में मुगल सेनापति शाहबाज खाँ द्वारा कुम्भलगढ़ फतह करने के तत्काल बाद ही भामाशाह के नेतृत्व में मेवाड़ की सेना ने मालवे पर जो आकस्मिक धावा किया और मेवाड़ के लिए धन और साधन प्राप्त किये, वह इतिहासप्रसिद्ध घटना है।[6] प्रसिद्ध है कि चूलिया में महाराणा प्रताप को भामाशाह ने पच्चीस लाख

---

१. गौ० ही० ओझा : उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग १, पृ० ४३१; कविराजा श्यामलदास : वीर विनोद, भाग २, पृ० १५८

२. वही

३. भामाशाह को प्रधान बनाने के साथ ताराचन्द को मुगल साम्राज्य की सीमा से सटे हुए महत्त्वपूर्ण इलाके गोड़वाड़ का शासक नियुक्त किया गया था।

४. ओझा—उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग १, पृ० ४६; मुंशी देवीप्रसाद प्र० च०, ४२, श्यामलदास : वीर विनोद, पृ० १६४

५. महाराणा प्रताप स्मृति ग्रन्थ, पृ० ११५

६. कविराजा श्यामलदास ने लिखा है कि शाहबाज खाँ द्वारा कुम्भलगढ़ फतह करने के उपरान्त महाराणा का प्रधान भामाशाह कुम्भलमेर की रैयत को लेकर मालवे में रामपुरे की तरफ चला गया जहाँ के राव दुर्गा ने उनको बड़ी हिफाजत के साथ रखा (वीर विनोद, भाग २, पृ० १५७)। भामाशाह ने उसी समय मुगलाधीन मालवे के इलाके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रुपये तथा बीस हजार अशर्फियाँ भेंट किये थे। यह विश्वास किया जाता है कि वह धन मालवा पर किये गये धावे के बाद ही प्राप्त हुआ था। मालवा आक्रमण के बाद ही दिवेर के मुगल थाने पर मेवाड़ी सेना ने आक्रमण कर दिवेर की नाल पर कब्जा कर लिया। इस आक्रमण में कुंवर अमरसिंह के साथ भामाशाह भी था।[1] प्रसिद्ध इतिहासकार डा० कालिकारंजन कानूनगो ने लिखा है कि दिवेर के महत्त्वपूर्ण युद्ध में चण्डावतों और शक्तावतों के साथ भामाशाह ने प्रमुख भाग अदा किया था।[2] दिवेर विजय के बाद ही महाराणा प्रताप ने कुम्भलगढ़ पर आक्रमण किया और वहाँ स्थित मुगल सेना को परास्त कर किले पर कब्जा कर लिया।[3]

महाराणा प्रताप को अपने दीर्घकालीन संघर्ष की बड़ी सफलता १५८९ में मिली जब चित्तौड़, मांडलगढ़ और अजमेर को छोड़कर शेष मेवाड़ के हिस्सों पर उनका पुनः अधिकार हो गया। इस विजय अभियान में उनके प्रधान भामाशाह की प्रधान भूमिका रही।[4] (वीर विनोद, भाग २, पृ० १६४)।

जैन कवि दौलतविजय ने अपने ग्रन्थ 'खुमाण रासो' में उल्लेख किया है कि महाराणा अमरसिंह के काल में भामाशाह ने अहमदाबाद पर जबरदस्त धावा मारा और वहाँ से दो करोड़ का धन लेकर आया।[5] ऐतिहासिक तथ्यों के अध्ययन के आधार पर यह आक्रमण महाराणा प्रताप के समय में भामाशाह द्वारा धन एकत्रित करने हेतु किये गये अभियानों में से एक होना चाहिए। भामाशाह की मृत्यु महाराणा प्रताप के देहावसान के तीन वर्ष बाद ही हो गई थी।

भामाशाह के मेवाड़ के प्रधान पद पर आसीन होने और सैन्य व्यवस्था एवं अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित गतिविधियों में उसकी प्रमुख भूमिका को देखते हुए इस बात का अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है कि राज्य की प्रशासन-व्यवस्था, आर्थिक प्रबन्ध, युद्ध नीति, सैन्य संगठन, आक्रमणों की योजना आदि तैयार करने में भामाशाह का महाराणा प्रताप के सहयोगी एवं सलाहकार के रूप में प्रमुख योगदान रहा होगा। महाराणा के आदेश से भामाशाह द्वारा जारी किये गये कई ताम्रपत्र भी मिले हैं जो उसके प्रधान पद पर आसीन होने तथा राज्य के शासन प्रबन्ध में उसकी महत्त्वपूर्ण स्थिति को दर्शाते हैं।[6]

भामाशाह के उज्ज्वल चरित्र पक्ष को प्रकट करने वाली एक अन्य ऐतिहासिक घटना का उल्लेख मिलता है। बादशाह अकबर अपने साम्राज्य की सुदृढ़ता एवं विस्तार के लिए भेद नीति का सहारा लेकर राजपूत राजाओं एवं योद्धाओं को एक दूसरे के विरुद्ध करके तथा राजपूत राज्यों के भीतर बान्धवों-रिश्तेदारों के बीच पारस्परिक कलह

में धावा बोलकर धन वसूल किया होगा। मालवे पर किये गये आक्रमण में भामाशाह का भाई ताराचन्द भी उसके साथ था। अकबर के सेनापति शाहबाज खाँ ने धावे के बाद में बड़ी सेना का पीछा किया था, उस समय लड़ते-लड़ते ताराचन्द बसी ग्राम के पास घायल हो गया था। बसी का स्वामी सांईदास उसको उठाकर ले गया और उसके उपचार की व्यवस्था कराई।

१. वही, पृ० १५८
२. K. R. Quanungo, Studies in Rajput History, p. 52
३. वीर विनोद पृ० १५८ ४. वही, पृ० १६४
५. शोधपत्रिका वर्ष १४, अंक १, पृ० ६३
६. (क) महाराजाधिराज महाराणा श्री प्रतापसिंघ आदेशातु चौधरी रोहितास कस्य ग्राम मया कीधो ग्राम डाईलागा बड़ा माहे पेडा ४ बरसाली रा उदक·····सं० १६५१ वर्षे आसोज सुद १५ दव श्रीमुख बीदमान सा० भामा
(ख) सिधश्री महाराजाधिराज महाराणाजी श्री प्रतापसिंघजी आदेशातु तिवाड़ी साहुल नायण भवान काना गोपाल टीला धरती उदक आगे राणांजी श्री जी ता—रा पत्र करावे दीधो थो प्रगणे जाजपुर रा राम ग्राम पडेर पट्टे हलै धरती बीगा धारा करे दीधो श्रीमुख हुकम हुआ। सा० भामा सं० १६४५ काती सुदी १५
(श्री रामवल्लभ सोमानी का लेख—दानवीर भामाशाह—मरुधरकेसरी अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० १७५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पैदा करके अपने दरबार में उच्च पद, मनसब आदि का प्रलोभन देता था। इतना ही नहीं, वह राजपूत राज्यों के प्रमुख प्रशासनिक अधिकारियों को भी मुगल दरबार में प्रतिष्ठा और पद देने का प्रलोभन देकर अपनी ओर मिलाने का प्रयत्न करता था। जब अकबर की महाराणा प्रताप को परास्त करने की सभी कोशिशें नाकामयाब हुईं तो उसने प्रताप के प्रधान भामाशाह को अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया। इस उद्देश्य से अकबर ने अपने चतुर कूटनीतिज्ञ सेनापति अब्दुर रहीम खानखाना को भामाशाह से मुलाकात करने का आदेश दिया। खानखाना की भामाशाह से यह भेंट मालवे में हुई जहाँ भामाशाह उस समय मौजूद था। खानखाना द्वारा दिये गये प्रलोभनों का वीरवर बलिदानी भामाशाह पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।[1] यह प्रलोभन उस समय दिया गया जबकि महाराणा प्रताप और उनके सहयोगी भीषण आर्थिक संकट और सैनिक दबाव के बीच जीवन और मृत्यु का संघर्ष कर रहे थे। ऐश्वर्यपूर्ण जीवन के प्रलोभन को ठुकराकर भामाशाह ने स्वतन्त्रता और स्वाभिमान का जीवन जीने के लिए संकटों, कठिनाइयों और अभावों से जूझते रहने के स्थिति को अपनाना श्रेयस्कर समझा। यह बात ही उनको इतिहास में महाराणा प्रताप के समकक्ष आदर्श स्थान प्रदान कर देती है।

भामाशाह ने महाराणा प्रताप तथा उनके बाद महाराणा अमरसिंह के राज्यकाल में जिस वीरता, कार्यकुशलता और राज्यभक्ति के साथ प्रधान का कार्य किया उससे भामाशाह और उसके परिवार को जो प्रतिष्ठा और विश्वास मिला, उसके कारण भामाशाह के बाद उसके परिवार में तीन पीढ़ियों तक मेवाड़ राज्य का प्रधान पद बना रहा। भामाशाह की मृत्यु के बाद महाराणा अमरसिंह ने उसके पुत्र जीवशाह को मेवाड़ का प्रधान बनाया जो बादशाह जहाँगीर के साथ की गई सन्धि के समय कुँवर कर्णसिंह के साथ बादशाह के पास गया था। जीवशाह की मृत्यु के बाद उसके पुत्र अक्षयराज को मेवाड़ का प्रधान बनाया गया।[2] भामाशाह और उसके परिजनों द्वारा अर्पित त्यागपूर्ण सेवाओं के कारण समाज से उनको जो सम्मान मिला, वह बाद के काल में भी कायम रहा।[3]

कर्मवीर भामाशाह के कृतित्व एवं देन की प्रशंसा करते हुए सुप्रसिद्ध इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड ने लिखा है कि भामाशाह का नाम मेवाड़ के उद्धारक के रूप में प्रसिद्ध है।[4] सुप्रसिद्ध इतिहास-ग्रन्थ वीर विनोद के लेखक श्यामलदास ने लिखा है—भामाशाह बड़ी जुअरत का आदमी था। महाराणा प्रतापसिंह के शुरू के समय से महाराणा अमरसिंह के राज्य के २½-३ वर्ष तक प्रधान रहा। इसने बड़ी-बड़ी लड़ाइयों में हजारों आदमियों का खर्चा चलाया। इसने मरने से एक दिन पहले अपनी स्त्री को एक बही अपने हाथ की लिखी हुई दी और कहा कि इसमें मेवाड़ के खजाने का कुल हाल लिखा हुआ है। जिस वक्त तकलीफ हो, यह महाराणा की नज्र करना। इस खैरख्वाह प्रधान की इस बही के लिखे हुए खजाने से महाराणा अमरसिंह का कई वर्षों तक खर्च चलता रहा। जिस तरह वस्तुपाल तेजपाल, जो अन्हिलवाड़े के सोलंकी राजाओं के प्रधान थे और जिन्होंने आबू पर जैन मन्दिर बनवाये, वैसा ही पराक्रमी और नामी भामाशाह को भी जानना चाहिये।[5] प्रसिद्ध इतिहासकार डा० कालिकारंजन कानूनगो ने भामाशाह के सम्बन्ध में लिखा है—

---

१. कविराजा श्यामलदास : वीर विनोद, भाग २, पृ० १५८
अकबर की भेद नीति का उदाहरण बीकानेर राज्य का प्रधान ओसवाल जाति का बच्छावत कर्मचन्द है, जिसको मुगल दरबार में बैठक देकर उसने अपना प्रयोजन पूरा किया था।

२. श्यामलदास : वीर विनोद, भाग २, पृ० २५१.

३. महाराणा स्वरूपसिंह के राज्यकाल (१८४२-१८६१) में मेवाड़ में एक विवाद उठ खड़ा हुआ कि ओसवालों की ज्यात में प्रथम तिलक किसको दिया जावे? इस पर महाराणा ने वि०सं० १९१२, ज्येष्ठ शुक्ला १५ को एक पट्टा लिखा कर भामाशाह के परिवार वालों को यह प्रतिष्ठा देने का आदेश दिया।

४. James Tod : Annals and Antiquities of Rajasthan, Vol. I. p. 275

५. कविराजा श्यामलदास : वीर विनोद, भाग २, पृष्ठ २५१-२५२.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'The name of Bhama Shah is remembered throughout Rajputana with as tender affection and reverence as that of Maharana Pratap. Bharmal's two sons Bhama Shah and Tarachand grew up dashing soldier and capable administrator and fought in the battle of Holdighati under Maharana Pratap. He made Bhama Shah his pradhan and appointed Tarachand to the charge of Godwar district. During the critical years of Pratap's fortune Bhama Shah raided Akbar's territory of Malva and brought a booty of twenty lakhs of rupees and twenty thousand asharfis to the Maharana.....Bhama Shah was neither Netaji Palkar nor Nana Fadnavis."[1]

निस्सन्देह ही भामाशाह की प्रशंसा में जो कुछ भी कहा जाय, पर्याप्त नहीं होगा। वह एक सच्चा देशभक्त, त्यागी और बलिदानी पुरुष था। वह प्रताप की तरह आन-बान का पक्का था। वह कठिन से कठिन संकटों में अविचलित एवं दृढ़ रहने वाला योद्धा था। उसका उदात्त नैतिक चरित्र, उसकी स्वामिभक्ति और देश-रक्षा के लिये सर्वस्व समर्पणकारी भावना, उसका अदम्य साहस और शौर्य, सैन्य संचालन की दृष्टि से उसका उच्च कौशल और शासन व्यवस्था में निपुणता भामाशाह अपने इन गुणों के कारण महाराणा प्रताप का अतिप्रिय एवं सर्वाधिक विश्वास-पात्र सहयोगी बन गया। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि प्रताप की सफलता में भामाशाह जैसे कर्मवीर का अत्यन्त अमूल्य योगदान रहा है और यही कारण है कि स्वतन्त्रता के अमर सेनानी महाराणा प्रताप के साथ भामाशाह का नाम अभिन्न रूप से जुड़ गया है।

भामाशाह का देहावसान वि० सं० १६५६ माघ शुक्ला ११ (२७ जनवरी) में हुआ जब वह सिर्फ ५२ वर्ष का था।[2]

□

---

१. K. R. Quanungo : Studies in Rajput History, p. 51-52

नेताजी पालकर छत्रपति शिवाजी का विश्वासपात्र सहयोगी मराठा सरदार था, जो बाद में मुगल बादशाह औरंगजेब के प्रलोभन में आकर शिवाजी का साथ छोड़ गया।

नाना फड़नवीस मराठा राज्य का एक बहुत कुशल प्रशासक एवं चतुर कूटनीतिज्ञ हो गया है। किन्तु उसके खिलाफ बड़ी मात्रा में राजकीय सम्पत्ति को हड़पने का इलजाम है।

२. कविराजा श्यामलदास : वीर विनोद, भाग २, पृ० २५१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org